-गजानन माधव मुक्तिबोध

● कविताएं..

लहर में तो हूं ...

तूफां में न सही लहर में तो हूं
शहर में ना सही सहर में तो हूं
माना ग़ज़ल में बस तुम ही तुम हो
मुकम्मल में न सही बहर में तो हूं
बहे तुम जा रहे बह मैं भी रहा
नदी में ना सही नहर में तो हूं
कुछ तो है जो मिटाए ना मिटती
दवा में ना सही ज़हर में तो हूं
रहम कर न कर मुझपे तेरी मर्जी
रहमत मे न सही कहर में तो हूं

-डॉ. एमडी सिंह, पीरनगर, गाजीपुर

तलाश...

मेरे चारों ओर शिविर लगे हुए हैं
जहां नयी-नयी तालीमें दी जा रही हैं
दिशाओं में शोर है, इतिहास बदला जा रहा है
दलित मूल्यों के पाये ढाहे जा रहे हैं
परम्परा के अनुसार कोई मसीहा या कोई
अवतार जन्म ले रहा है
मैं एक अदना आदमी की हैसियत से
शिविर को देख रह हूं
ग्लोब पर खड़ा होकर
भूगोल को देख रहा हूं
जब कभी मेरी अंतड़ियों की ऐंठन से
आह और कराह निकलती है
तभी फुंफकार के अपराध में
मेरी क़ौम की बस्तियों में
आग लगती रही है आग
जिसे शिविर के लोग
तमाशे की तरह देखते रहे हैं
मसीहा मुस्कुराता रहा है
और मैं चौराहे पर खड़ा होकर
अपनी जमात की तलाश करता रहा
तलाश!!

-बाबूलाल मधुकर

● कहानी/-राजिन्दर सिंह बेदी

तुलादान...

गतांक से आगे....

उबुधई के पुर्वा में सीतला (चेचक) का जोर था। पुरवा की औरतें बंदरियों की तरह अपने अपने बच्चों को कलेजों से लगाए फुर्ती थीं। पड़ोसन की दहलीज तक नहीं फांदती थीं। कहीं बू, न पकड़ लें और सीतला माता तो यूं भी बड़ी गुस्सैली हैं... डाल चंद की लड़की, महा ब्राह्मण के दो भतीजे, सबको सीतला माता ने दर्शन दिया। उन की माएं घंटों उनके सिरहाने बैठ कर सच्चे मोतिया के हार रख कर गौरी मय्या गाती रहें और देवी माता से प्रार्थना करती रहीं कि उन पर अपना गुस्सा न निकाले। जब बच्ची राजी हो जाते, तो मंदिर में माथा टेकने के लिए ले जातीं। माता तो हर एक कस्मि की ख्वाहिश पूरी करती थी। -जारी

जब सीतला का गुस्सा टला और बू कुछ कम हुई, तो पुर्वा वालों ने सीतला की मूर्ती बनाई। उसे खूब सजाया। सुखी नंदन के बाप ने मूंगे की माला सीतला माता के गले में डाली। सबने मिल कर माता को मंदिर से निकाला और सजी हुई बहली में बिराजमान किया और बहली को घसीटते हुए गानो से बाहर छोड़ने के लिए ले गए। पुर्वा के सब बूढ़े बच्चे जुलूस में इकट्ठे हुए, पीतल की खड़तालीं, ढोल ढमके बजते जा रहे थे। लोग चाहते थे कि क्रोधी माता को हरिया के तालाब के पास महात्मा जी की कुटिया के गरीब उन ही की निगह-बानी में छोड़ दिया जाए ,ताकि माता उस गांव से किसी दूसरे गांव का रुख करे। वो माता को खुशी खुशी रवाना करना चाहते थे, ताकि उन पर उलटी न बरस पड़े। सुखी भी जुलूस के साथ गया। बाबू भी शामिल हुआ। न बाबू को सुखी के बुलाने की जुर्रत पैदा हुई, न सुखी को बाबू के बुलाने की। हां कभी कभी वो कन्खियों से एक दूसरे को देख लेते थे।

हरिया के तालाब के पास ही धोबी घाट था। एक छोटी सी नहर के जरिये तालाब का पानी घाट की तरफ खींच लिया जाता था। घाट था बहुत लंबा चौड़ा। करीब के कस्बों में से धोबी कपड़े धोने आया करते थे। उसी घाट पर बाबू और उस के भाई बंदु, बाप दादा वही एक गाना, उसी पुरानी सुरताल से गाते हुए कपड़े धोए जाते। एक दिन घाट पर सारा दिन बाबू, सुखी के बगैर शिद्दत की तन्हाई महसूस करता रहा। कभी कभी अकेला ही क्रोटन चील के बल खाते हुए तनों पर चढ़ जाता और उतर आता। गोया सुखी के साथ कान पता खेल रहा हो। खेल में लुत्फ न आया तो वो ईंटों के ढेर में रखी हुई सीतला माता की मूर्ती को देखने लगा और पूछने लगा। आया वो इस गांव से चली गई हैं य नहीं। माता कुछ को रूप (बद-शक्ल) नाराज, दिखाई देती थीं। शाम को बाबू घर आया तो उसे हल्का हल्का तप था, जो कि बढ़ता गया। बाबू को अपनी सुध-बुध न रही। एक दफा बाबू को होश आया तो देखा माँ ने मोतिया का एक हार उस की चारपाई पर रखा था। करीब ही ठंडे पानी से भरा हुआ कोरा घड़ा था। घड़े के मुंह पर भी मोतिया के हार पड़े थे और मां एक नया खरीदा हुआ पंखा हल्के हल्के हिला हिला कर मुंह में गोरी मैय्या गुनगुना रही थी। पंखा मरते हुए आदमी की नब्ज की तरह आहिस्ता-आहिस्ता हिल रहा था और अलगनी पर फुलकारियों के पर्दे बाबू की बूढ़ी दादी की झुर्रियों की तरह लटक रहे थे और ये सामान कुछ माता की वजह से किया गया था। बाबू ने अपनी पलकों पर मनों बोझ महसूस किया। उसे तमाम बदन पर कांटे चुभ रहे थे और यूं महसूस होता था, जैसे उसे किसी भट्टी में झोंक दिया गया हो।

दो तीन दिन तो बाबू ने पहलू तक न बदला। सिर्फ उतना कि वो आंखें खोल कर देख सकता था। आंख खुली तो उसने देखा। सुखी और उस की मां दरवाजे के करीब बैठे हुए थे।

सेठानी ने नाक पर दुपट्टा ले रक्खा था। दर-अस्ल वो दरवाजे में इसलिए बैठे थे कि कहीं बू न पकड़ लें। मगर बाबू ने समझा, आज उन लोगों का ग़ुरूर टूटा है। उस ने दिल में एक खुशी की लहर महसूस की...

दो तीन दिन तो बाबू ने पहलू तक न बदला। सिर्फ उतना कि वो आंखें खोल कर देख सकता था। आंख खुली तो उसने देखा। सुखी और उस की मां दरवाजे के करीब बैठे हुए थे। सेठानी ने नाक पर दुपट्टा ले रक्खा था। दर-अस्ल वो दरवाजे में इसलिए बैठे थे कि कहीं बू न पकड़ लें। मगर बाबू ने समझा, आज उन लोगों का ग़ुरूर टूटा है। उस ने दिल में एक खुशी की लहर महसूस की।

एक ज्योतिषी जी साधूराम को बहुत सी बातें बता रहे थे। उन्होंने नारियल, बताशे, खुमनी, मंगवाई। साधूराम कभी कभार अपना हाथ बाबू के तपते हुए माथे पर रख देता, और कहता...

बाबू... ओ बाबू... बेटा बाबू?

जवाब न मिलता। तो एक मुक्का सा उस के कलेजा में लगता और वो गुम हो जाता।

बाबू ने ब-मुश्किल तमाम कांटों के बिस्तर पर पहलू बदला। फूल हाथ से सरका कर सिरहाने की तरफ रख दिए। गले में तल्खी सी महसूस की। हाथ बढ़ाया तो मां ने पानी दिया। बाबू ने देखा। उस के एक तरफ गंदुम का ढेर लगा हुआ था। ज्योतिषी जी के कहने पर बाबू की मां ने उसे आहिस्ता से उठाया और एक तरफ लटकते हुए तराजू के एक पलड़े में रख दिया। तराजू के दूसरे पलड़े में गंदुम और दूसरी अजनास डालनी शुरू कीं। बाबू ने अपने आपको तुलता हुआ देखा तो दिल में एक खास किस्म का रुहानी सुकून महसूस किया। चार दिन के बाद आज उस ने पहली मर्तबा कुछ कहने के लिए जबान खोली और इतना कहा।

अम्मां... कुछ गंदुम और माश की दाल दे दो। सुखी की मां को... कब से बैठी है बेचारी।

साधूराम ने फिर अपना हाथ बाबू के तपते हुए माथे पर रख दिया। उस की आंखों से आंसुओं की चंद बूंदें गिर कर फर्श पर बिखरे हुए कपड़ों में जज़्ब हो गईं। साधूराम ने कपड़ों को एक तरफ हटाया, और बोला।

पंडित-जी... दान से बोझ टल जाएगा?... मैं तो घर-बार बेच दूं... पंडित-जी...

बाबू की मां ने सिसकियां लेते हुए सेठानी जी को कहा।

मालकिन... कल नैनीताल जाओगी?... कल... नहीं तो परसों मिलेंगे कपड़े... हाय! मालकिन! तुम्हें कपड़ों की पड़ी है।

बाबू को कुछ शक सा गुजरा। उस ने फिर तकलीफ सह कर पहलू बदला और बोला।

अम्मां... अम्मां... आज मेरा जन्म-दिन है?

अब साधू राम के सोते फूट पड़े। एक हाथ से गले को दबाते हुए वो भर्राई हुई आवाज में बोला।

हां बाबू बेटा... आज जनम-दिन है तेरा... बाबू... बेटा!

...बाबू ने अपने जलते हुए जिस्म और रूह पर से तमाम कपड़े उतार दिए। गोया नंगा हो कर सुखी हो गया और मनों बोझ महसूस करते हुए आंखें आहिस्ता-आहिस्ता बंद कर लें।

-समाप्त

● शायरी...

मसरूर भी हूं ख़ुश भी हूं लेकिन ख़ुशी नहीं
तेरे बग़ैर ज़ीस्त तो है ज़िन्दगी नहीं
मैं दर्द-ए-आशिक़ी को समझता हूं जान-ओ-रूह
कम्बख्त वो भी दिल में कभी है कभी नहीं

◆ ◆ ◆

ला ग़म ही डाल दे मिरे दस्त-ए-सवाल में
मैं क्या करूं ख़ुशी को जो तेरी ख़ुशी नहीं
कुछ देर और रहने दे ख़ुद्दारी-ए-जुनूं
दामन तो चाक होना है लेकिन अभी नहीं

◆ ◆ ◆

साक़ी निगाह-ए-नाज़ से लिल्लाह काम ले
सौ जाम पी चुका हूं मगर बे-ख़ुदी नहीं
रखना पड़ेगी तुम को तही-दामनी की लाज
मुझ को कमी ज़रूर है तुम को कमी नहीं

◆ ◆ ◆

बहज़ाद साफ़ साफ़ मैं कहता हूं हाल-ए-दिल
शर्मिंदा-ए-कमाल मिरी शाइरी नहीं

-बेहज़ाद लखनवी

● जाना पे जी निसार हुआ...

जाना पे जी निसार हुआ क्या बजा हुआ
जाना पे जी निसार हुआ क्या बजा हुआ
उस राह में ग़ुबार हुआ क्या बजा हुआ
मुद्दत से राज़-ए-इश्क़ मिरे पे अयां न था
ये भेद आशकार हुआ क्या बजा हुआ
ताज़े खिले हैं दाग़ के गुल दिल के बाग़ में
फिर मौसम-ए-बहार हुआ क्या बजा हुआ
दिल तुझ परी की आग में सीमाब की मिसाल
आख़िर कूं बे-क़रार हुआ क्या बजा हुआ

-सिराज-औरंगाबादी